रंगरेज़ों से जुड़ा है लिटमस का इतिहास

सुशील जोशी

फूलों के रंग बहुत खूबसूरत होते हैं जैसे जासौन का सुर्ख लाल रंग। मगर क्या आपने कभी इसका रंग बदलकर देखने की कोशिश की है? काफी आसान है इसका रंग बदलना। वैसे हो सकता है आपने एक अन्य चीज़ का रंग बदलते देखा हो। हल्दी वैसे तो पीली होती है मगर ज़रा उसमें चूना लगाकर देखिए। है ना कमाल?

वनस्पतियों से प्राप्त रंगों का उपयोग अम्ल और क्षार के सूचकों के रूप में बखूबी किया जा सकता है। प्रयोगशाला में लिटमस का उपयोग तो हम करते ही हैं। लिटमस अम्ल और क्षार का एक अत्यंत सुविधाजनक सूचक है। लिटमस के रूप में आप इसे जेब में रखकर घूम सकते हैं। यह इतना प्रसिद्ध हुआ कि सच और झूठ के फैसले में 'दूध का दूध, पानी का पानी' की तरह 'लिटमस टेस्ट' मुहावरे का भी प्रयोग किया जाता है।

कई बार लोग पूछते हैं कि यह लिटमस चीज़ क्या होती है? यह मिलता कहां से है? इसकी रासायनिक संरचना क्या है? तो मैंने कुछ खोजबीन की और जो कुछ पता चला वह काफी दिलचस्प था।

हल्दी को रंग बदलते तो हम सबने देखा है, प्राचीन काल से लोग देखते आ रहे हैं। प्राचीन काल से लोग यह भी देखते आ रहे थे कि वनस्पतियों से प्राप्त रंगों को अलग-अलग रंगों में प्राप्त किया जा सकता है। काफी पुराने

ज़माने से रंगरेज़ लोग रंगाई के लिए वनस्पति से प्राप्त रंगों का उपयोग करते आए हैं।

मगर कहते हैं ना कि गालिब का है कुछ अन्दाज़े बयां और! रंगरेज़ों ने अपने अनुभव से देखा था कि वनस्पतियों से प्राप्त पदार्थों का रंग कई बातों पर निर्भर करता है। जैसे रंग पर इस बात का असर पड़ता है कि उसे वनस्पति से किस मौसम में इकट्ठा किया गया है। इसके अलावा रंग पर इस बात का भी असर पड़ता था कि उसे किस विधि से प्राप्त किया गया है।

मसलन आइरिस नामक पौधे के बैंगनी रस में यदि फिटकरी डाल दी जाए तो उसका रंग हरा हो जाता है। इसी प्रकार से एक लाइकेन रोसेला से बैंगनी रंग प्राप्त होता था। किन्तु यदि इसमें पेशाब मिलाकर इसे क्षारीय बना दिया जाता, तो रंग लाल हो जाता था। और यदि बैंगनी रस में तेज़ाब मिला दिया जाता तो उसका रंग नीला हो जाता था।

रंगरेज़ लोग इन तकनीकों का खूब उपयोग करते थे। मगर इसमें से एक वैज्ञानिक तथ्य खोज निकाला रॉबर्ट बॉयल ने। उन दिनों (1664 में) रॉबर्ट बॉयल अपनी पुस्तक 'एक्स्पेरिमेंटल हिस्ट्री ऑफ कलर्स' (रंगों का प्रायोगिक इतिहास) लिख रहे थे। उनका ध्यान रंगरेज़ों के इस करतब पर भी गया। मगर बॉयल मात्र इस करतब का ब्यौरा देकर रुके नहीं।

अम्ल या क्षार मिलाकर अलग-अलग रंग प्राप्त कर सकते हैं, तो हम इन रंगों का उपयोग अम्ल और क्षार की पहचान के लिए क्यों नहीं कर सकते? उस समय अम्ल और क्षार की पहचान के लिए कोई सूचक उपलब्ध न था। दूसरी बात यह थी कि खासतौर से खनिज अम्ल उस समय रासायनिक विश्लेषण में बहुत उपयोगी हो गए थे। अतः अम्लीय गुण और क्षारीय गुण की पहचान के लिए किसी आसान तरीके की दरकार थी। बॉयल के उक्त तर्क में से लिटमस का जन्म हुआ। यह रोसेला नामक लाइकेन के सत से प्राप्त एक रंजक था।

इसके बाद तो कई ऐसे सूचक खोजे गए। मगर लिटमस ही प्रथम अम्ल-क्षार सूचक था। उस समय इसका उत्पादन मात्र नीदरलैण्ड्स में होता था और इसे बनाने की विधि काफी गुप्त रखी जाती थी। नीदरलैण्डस में 16वीं सदी से ही इसका उत्पादन होता चला आ रहा था। यह एकाधिकार 1940 में कहीं जाकर समाप्त हुआ जब इंग्लैण्ड में जॉनसन्स ने इसका उत्पादन शुरू किया।

दरअसल लाइकेन से रंजकों का एक मिश्रण मिलता है। इस मिश्रण में

ऑर्चिल, ओर्सीन, लिटमस आदि रंजक होते हैं। अतः जो लिटमस हम इस्तेमाल करते हैं वह संभवतः एक मिश्रण ही है। शुरुआती दौर में इनके उत्पादन के लिए एकमात्र लाइकेन ओक्रोलेचिया टार्टेरिया का ही उपयोग होता था।

एक रोचक बात यह भी है कि सोलहवीं सदी से उपयोग किए जा रहे इन रंजकों की रासायनिक संरचना का पता काफी देर से चल पाया। इनके विश्लेषण में सबसे बड़ी बाधा तो शायद इन्हें शुद्ध रूप में प्राप्त करने की थी। इस दिशा में पहला कदम पियरे रॉबिकेट ने 1829 में उठाया जब उन्होंने मिश्रण में से ओर्सीन नामक रसायन अलग किया। इसके बाद 1840 में इस लाइकेन से चार अलग-अलग रंगीन पदार्थ प्राप्त किए गए – एज़ोलिटमिन, स्पेनियोलिटमिन, इरिथ्रोलिन और इरिथ्रोलिटमिन। इरिथ्रोलिटमिन ही लिटमस है। यह एक बहुलक होता है।

इन यौगिकों की रचना ज्ञात करने का श्रेय हैन्स मुसो को जाता है। उन्होंने 1956 से 1965 के बीच इनका अध्ययन करके कम से कम 25 शोध पत्र प्रकाशित किए।

वैसे रंगरेज़ों और लिटमस के संबंधों

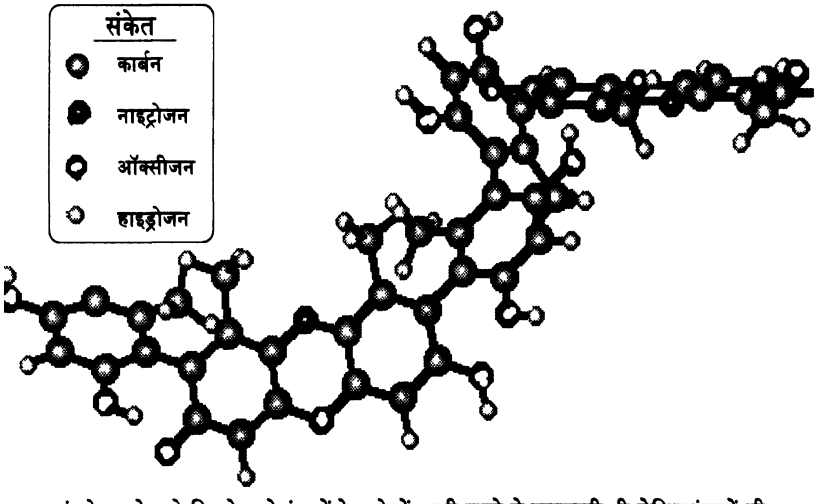

यूं तो लाइकेन से मिलने वाले रंजकों के बारे में काफी पहले से जानकारी थी लेकिन रंजकों की रासायनिक संरचना के बारे में कोई खास मालूमात न थे। सन् 1840 के आसपास लाइकेन से चार अलग-अलग रंगीन पदार्थ प्राप्त किए गए इन चार पदार्थों में एक था – इरिथ्रोलिटमिन। इरिथ्रोलिटमिन ही लिटमस है जो एक बहुलक है। यहां दी गई रासायनिक संरचना लिटमस की त्रिआयामी बनावट को दर्शा रही है।

शोखियों में घोला जाए फूलों का शबाब
लिटमस का उत्पादन

मध्य युग में लिटमस प्राप्त करने के लिए पहले रोसेला लाइकेन में से ऑर्चिल प्राप्त किया जाता था। ऑर्चिल प्राप्त करने की विधि पढ़कर मुझे तो बस उस गाने की याद आई 'शोखियों में घोला जाए फूलों का शबाब'। आप स्वयं इस विधि का लुत्फ उठाइए।

ऑर्चिल बनाने की विधिः

एक पाउण्ड लेवॉ की ओर्सेल लो, एकदम स्वच्छ; इसे पेशाब से भिगाओ, इसमें साल अमोनिएक, साल गेमे और साल्ट पीटर प्रत्येक दो–दो आउन्स मिलाओ, इन्हें अच्छी तरह कूटकर मिलाओ और फिर 12 दिन के लिए छोड़ दो। दिन में दो बार मिश्रण को हिलाओ, और फिर इसे लगातार गीला रखो, थोड़ी–थोड़ी पेशाब मिलाते रहो, इस स्थिति में इसे आठ दिन रहने दो, लगातार हिलाते रहो, इसके बाद इसमें डेढ़ पाउण्ड पोटाश डालो और अच्छी तरह कूटो और फिर डेढ़ पाइंट बासी पेशाब डालो। फिर से आठ दिन और पड़ा रहने दो, समय–समय पर हिलाते रहो और उतनी ही मात्रा में पेशाब डालो। पांच–छः दिन बाद दो ड्रेचम आर्सेनिक डालो, तब यह उपयोग के लिए तैयार है।

लिटमस उत्पादन के लिए अन्तर केवल इतना होता है कि पूरे मिश्रण में पोटाश, चूना और जिप्सम भी मिलाए जाते हैं।

आजकल लिटमस का उत्पादन ज़्यादा सरल विधि से किया जाता है।

लाइकेन को सोडियम कार्बोनेट व अमोनिया के घोल में पीसा जाता है। कई सप्ताह तक बीच-बीच में हिलाते हुए इसे पड़ा रहने देते हैं। धीरे-धीरे इसका रंग बैंगनी और फिर नीला हो जाता है। अब लाइकेन को सुखाकर पाउडर बना लेते हैं। इस अवस्था में लाइकेन में कुछ मात्रा में लिटमस और कुछ मात्रा में रंजक होते हैं। आल्कोहल के साथ घोलकर ओर्सीन को अलग कर लिया जाता है। इस प्रकार से शुद्ध लिटमस प्राप्त हो जाता है। ज़ाहिर है इस पूरी प्रक्रिया में बीच में तमाम पदार्थ बनते-बिगड़ते होंगे।

का एक पन्ना अभी और है। उसका संबंध लिटमस कागज़ से है। आपने ध्यान दिया होगा कि युनिवर्सल सूचक के अलावा लिटमस ही एक मात्र ऐसा सूचक है जिसका उपयोग लिटमस कागज़ के रूप में किया जाता है। आखिर लिटमस कागज़ बनाने का आइडिया कहां से आया? एक बार फिर हमें रंगरेज़ों की याद आती है।

रंगरेज़ लोग एक अन्य पौधे टर्नसोल (क्रोज़ोफेरा टिंक्टोरिया) से बैंगनी रंग प्राप्त किया करते थे। इस रंग को वे घोल के रूप में नहीं रखते थे। पौधे से इस रंग का घोल प्राप्त हो जाने पर वे कपड़े के टुकड़ों को इसमें भिगोकर, सुखाकर रख लिया करते थे। जब फिर से रंग प्राप्त करना होता था, तो इन कपड़ों को पानी में भिगोया जाता था। मज़ेदार बात यह थी कि ऐसा करने पर बैंगनी नहीं बल्कि सुर्ख लाल रंग प्राप्त होता था। दूसरी ओर यदि कपड़ों को भिगोने से पहले चूने के पानी में से निकाल लिया जाता तो बाद में बैंगनी रंग प्राप्त होता था।

कहते हैं कि कागज़ की पट्टियों को रोसेला के सत में भिगोकर लिटमस कागज़ बनाने का विचार बॉयल को यहीं से सूझा था।

सुशील जोशी: एकलव्य के होशंगाबाद विज्ञान शिक्षण कार्यक्रम और स्रोत फीचर सेवा से जुड़े हैं। विज्ञान लेखन भी करते हैं।